P: ISSN NO.: 2394-0344
E: ISSN NO.: 2455-0817
Remarking
Vol-II * Issue-VII* December- 2015

जनजातीय महिलाओं में अपनी संस्कृति के प्रति झुकाव

सुषमा पेंढ़ारकर
प्राध्यापक,
समाजशास्त्र विभाग,
शासकीय महाविद्यालय,
बरगी, जबलपुर

सारांश

जनजातीयाँ इस देश में पुरातन निवासी हैं जो सांस्कृतिक समग्रता भाषा, संस्थाएँ, विश्वास एवं प्रथाओं के आधार पर समाज के शेष भागों से पृथक दिखाइ देते हैं। आज जिस प्रकार जनजातीय समाज परिवर्तन की स्थिति में है उससे एक प्रश्न यह उठता है कि क्या जनजातीय जीवन की निरंतरता को बनाए रखा जा सकता है? जनजातीय सांस्कृतिक विकास इस निरंतरता का आधार है। यह प्रश्न विशिष्ट रूप से उन लोगों पर लागू होता है जो अपने गैर आदिवासी प्रदेशों में मूल स्थानों से दूर अपने जनजातीय सामाजिक सामुदायिक जीवन से पृथक रहते हैं। जनजातीय सांस्कृतिक मूल्यों को धरोहर के रूप में स्थापित कर उसकी महत्ता को बढ़ाने के सरकारी प्रयासों में वृद्धि देखी गयी। संग्रहालयों मे संग्रहित चित्रकला एवं मूर्तिकला एवं शिक्षण संस्थाओं के द्वारा लोक नृत्य गीत की प्रतिस्पर्धा इस परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण है। इस संपूर्ण प्रयास का उद्देश्य अजनजातीय समाज में जनजातीयों के प्रति अलगाव को दूर करना व जनजातीयों में प्रजातांत्रिक राष्ट्र के पूर्ण हिस्सेदारी की सोच को बढ़ाना था। यहाँ जनजातीयों में विशेषतः प्रवासी जनजातीयों में अपनी संस्कृति के प्रति मानसिकता महत्वपूर्ण है। सीखे हुए व्यवहार के अर्थ में संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती है। इस प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिका सर्वोपरि है। जनजातीय संस्कृति के प्रति सम्मान एवं आत्मीयता की भावना का विकास करना एवं अन्य संस्कृतियों के संदर्भ में जनजातीय संस्कृति को सुदृढ़ एवं समुन्नत बनाना तथा परिवर्तित परिवेश में अपनी अक्षुणता को बनाए रखने का सामर्थ्य विकसित करने में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। परिवर्तनशील एवं विकसित होते सामाजिक परिवेश में उराँव जनजातीय समूह में अपने संस्कृति के प्रति विचारों को जानने का प्रयास किया गया। प्रवासी उराँव जनजाति की महिलाओं में उनकी संस्कृति के प्रति रूचि का अभाव पाया गया एवं जनजातीय कलाओं का रूपान्तरित स्वरूप स्पष्ट हुआ। संस्कृति की अक्षुण्णता का आधार है भाषा और भाषा की निरंतरता का महिला अर्थात् उराँव जनजातीय महिलाओं में अपने संस्कृति के प्रचार, विकास एवं संवर्धन से संबंधित मानसिकता विशेष महत्वपूर्ण है। जनजातीय महिलाओं में उराँव भाषा के प्रति अरूचि सांस्कृतिक निरंतरता में बाधक सिद्ध होती है। प्रायः गैर आदिवासी क्षेत्रों में जनजातीय जीवन को यथावत बनाए रखने का प्रोत्साहन उनमें हीन भावना विकसित करता है।

मुख्य शब्द : जनजातीय भाषा, कला, सांस्कृतिक मूल्य, जनजातीय विकास।

प्रस्तावना

सामान्यतः जनजाति शब्द का प्रयोग किसी भौगोलिक क्षेत्र के उन निवासियों के लिए किया जाता है जिनका उस भौगोलिक क्षेत्र से जुड़े ज्ञान इतिहास में सबसे पुराना संबंध रहा हो। जनजातियों में पृथक्कता का बहुत आभास होता है। वे अपने को गैर जनजातीयों से अलग समझते ह। विभिन्न जनजातीयों के समूहों के बीच कोई खास सामाजिक अन्तः क्रिया नहीं पायी जाती है। परन्तु जनजातीय सदस्यों के बीच एकता का अभाव नहीं होता। मैंडलबॉम के अनुसार भारतीय जनजातीयों की विशेषताएँ क्रमशः/बंधुता एवं सामाजिक बंधनों का एक साधन है/व्यक्तियो एवं समूहों के बीच सोपान का अभाव पाया जाता है/दृढ़ और जटील औपचारिक संगठनों का अभाव /अतिरिक्त पूंजी संग्रहण और उपयोग तथा बाजार आधारित व्यापार का कम महत्व/धर्म का स्वरूप और सार में विभेद का अभाव/जीवन आनन्द प्राप्त करने की मनोदशा एवं खण्डीय स्वरूप/जनजातीयों का आकार लघु होता है। एन के बोस ने जनजातीयों की तीन श्रेणियाँ बताई हैं – 1. शिकारी, मछुआरे और संग्रहक 2. झूमकृषक 3. स्थायी कृषक जो हल व हल खींचने वाले पशुओं को प्रयोग में लाते हैं। जनजातीयों में संग्रहण, शिकार एवं कृषि आधारित अर्थव्यवस्था

में अभी भी पारम्परिक प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। परम्परा का भाव उनके लिए नए आर्थिक मूल्यों से अधिक है।

अधिकांश जनजाति संस्कृति के प्राथमिक धरातल पर जीवन यापन करते हैं उनकी संस्कृति अनेक संदभा में परिपूर्ण होती है। इन संस्कृतियों में जिज्ञासा का अभाव होता है। थोड़े से पीढियों का यथाथ इतिहास पौराणिक कथाओं व किंवदंतियों में मिल जाता है। सीमित परिधि व कम जनसंख्या के कारण इन संस्कृतियों के रूपों में स्थिरता रहती है। जनजातीयों में परसंस्कृतियों के प्रभाव ने अन्य संस्कृतियों से उनकी दूरी को कम किया किन्तु इनमें व्याप्त जनजातीय भावना ने सांस्कृतिक भिन्नता को बनाए रखा। प्रत्येक मानव समूह की संस्कृति में विशिष्टता का गुण पाया जाता है जो जनजातीय समाज में भी परिचलित होता है। जनजातीय संस्कृति आंशिक रूप से कृषक संस्कृति है और आंशिक मायन में अन्य और कुछ अंशों में यह नगरीय संस्कृति भी है।

आधुनिक शिक्षा व व्यवसाय के बढ़ते प्रभाव नगरीकरण, आधुनिकीकरण एवं वैश्वीकरण आदि प्रक्रियाओं ने जनजातीय संस्कृति के मूलभावों को भी प्रभावित किया। आधुनिक शिक्षा एवं आधुनिकता के गम्भीर संक्रमण ने मौलिक जनजातीय जीवन शैली को काफी सीमा तक विस्तृत एवं विलोपित कर दिया है इसके बावजूद आज भी अनेक जनजातीयाँ अनेकानेक पद्यति से अपने जनजाति होने संबंधी घोषणा व व्यवहार करती है। नवेन्दुदत्त मजूमदार के अनुसार ''भारत के राष्ट्रीय प्रजातांत्रिक ढाँचे में जनजातीय समूहों का एकीकरण इस प्रकार किया जाए कि उन्हें उनकी परम्परागत संस्कृति से पूरी तरह से विलग किया जाए जिससे उनको भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक क्षति पहुँचे। इसी प्रकार श्यामाचरण दुबे भी इस बात का समर्थन करते हैं कि जनजातीय क्षेत्र का आंशिक पृथक्करण करके उन्हें संरक्षण प्रदान किया जाए।

क्या जनजातीय संस्कृति की अखंडता के लक्षण को बनाए रखा जा सकता है? वास्तव में यह नियोजनकर्ताओं, राजनीतिज्ञों एवं सरकारों के लिए महत्वपूर्ण है ? इस संदर्भ में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1952 में एक आदिम जाति कल्याण सम्मेलन में विचार व्यक्त किया था कि ''क्या जनजातीयों का अन्य संस्कृति से आत्मसात करना उनकी उन्नति का लक्षण माना जाएगा अथवा उनकी संस्कृति को, परम्पराओं को व रीतिरिवाजों को बनाए रखने के लिए सुविधाएँ दी जाए ? इसी प्रकार स्व. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने भी क्योंकि शिक्षा व समाज सुधार के लिए आर्थिक सुविधाएँ देकर जनजातीयों को उनकी इच्छा पर छोड़ दिया जाए जिससे वे अन्य ऐसी संस्कृति को आत्मसात करेंगी अथवा अपनी मौलिकता को बनाए रखना चाहेंगी। इस वैचारिकी के अंतर्गत यह स्पष्ट हो रहा है कि जिन जनजातीयों ने परसंस्कृति को आत्मसात किया है वे आज पृथक रूप में हिन्दु अथवा ईसाईकृत जनजातीयों के अंतर्गत पृथक जनजातीय समूह से अधिक आर्थिक स्थिति में हैं। आज जनजातीयों में पर–संस्कृति से प्रभावित चार वर्ग दिखाई देते हैं 1. परसंस्कृति प्रभावहीन 2. अल्पप्रभावित 3. प्रभावित 4. स्वतंत्र सांस्कृतिक अस्तित्व वाले जो केवल नाम मात्र के लिए जनजाति हैं।

अध्ययन के लिए चयनित कुँडुख़र यानि उराँव जनजाति प्रायः तीन परम्परागत नामों से जानी जाती है। कुँडुख़ 2. उराँव 3. उरगँन ठाकुर। इनके नामों की विवेचना प्रचलित लोक कथाओं में मिलती है। ओराँव अथवा उराँव नाम इस समूह को दूसरे लोगों ने दिया। अपनी लोक भाषा में अपने को कुँडुख़ नाम से वर्णित करता है। इस जनजाति का नाम अंग्रेजी के ओ (O) अक्षर से प्रारम्भ होने के कारण नाम का उच्चारण ओराँव होता है। बिहार/छत्तीसगढ़ में यह उराँव नाम से प्रचलित है। झारखण्ड प्रान्त की 32 अनुसूचित जनजातीयों में उराँव प्रमुख जनजाति है। भारत के संपूर्ण तटवर्ती क्षेत्र में फैली दश की एक मात्र तथा सांथालों एवं गोंड़ के बाद देश की तीसरी सबसे अधिक जनसंख्या वाली जाति है। छत्तीसगढ़, उड़ीसा व म0प्र0 के तटवर्ती क्षेत्र में विरल रूप में फैली है।

उराँव जनजाति की भाषा का नाम कुँडुख़ है जो द्रविड भाषा परिवार की भाषा है। कुँडुख भाषा एक समृद्ध भाषा है। इस शब्द से उनके आंतरिक भाव की उत्पत्ति एवं काल क्रम विकास को जाना जाता है। उराँव शब्द बाहरी लोगों ने ही दिया है। लेकिन वर्तमान में इन्ह इसी नाम से जाना जाता है। जनजातीय भाषा का हस्तांतरण प्रमुखतः मौखिक रूप में होता है। जनजातीय भाषा को लिपिबद्ध करने का प्रयास किया जा रहा है हाल ही में लिपि तैयार करने की चेष्टा की गयी है। हिन्दी एवं अन्य भाषाओं का संपर्क होने से इनकी भाषा में अनेक अन्य शब्दों का समावेश हुआ है।

उराँव जनजातीय संस्कृति में फागू, सोहरे, माधे, करमा आदि प्रसिद्ध पर्व है साथ ही खद्दी, चांडी जतरा पर्व भी उराँव मनाते हैं। सभी पर्व सामूहिक रूप से मनाए जाते हैं। माघी पूर्णिमा के अवसर पर होने वाले चांडी पूजा में स्त्रियाँ भाग नहीं लेती। जतरा पर्व अगहन जतरा देवभान जतरा, जेठ जतरा के नाम से समय–समय पर मनाए जाते हैं। प्रकृति से घनिष्ठता व सानिध्य का महत्व उराँव जनजाति के रोतिरिवाजों में स्पष्ट होता है। प्रकृति में जन्म, विकास व नष्ट होने की प्रक्रिया को सामाजिक जीवन में जन्म विकास व मृत्यु के रूप में लिया जाता है जिससे जीवन में अवस्थाओं को संस्कारों के आधार से पूर्ण किया जाता है। उराँव जनजाति का सामाजिक संगठन पूर्ण रूप में लोकतंत्रात्मक संगठन का प्रतीक है। उराँव जनजाति का परिवार संयुक्त तथा एकल दोनों प्रकार का होता है। प्रमुख व्यवसाय कृषि होने के कारण मुख्य संपत्ति के रूप में भूमि प्रमुख होती है। वास्तव में जनजातीयों में भूमि समुदाय ही संधारित होती है। उराँव मान्यता के अनुसार भूमि ''धर्मेस'' की देन है इसलिए इसको बेचा या खरीदा नहीं जाता। सामान्यतः उराँव संयुक्त परिवार में बुजुर्ग जो मुखिया होता है वह पूरे परिवार पर नियंत्रण करता है, किन्तु वर्तमान में संयुक्त परिवारों का ह्रास होता जा रहा है और केन्द्रीय या एकल व नगरीय परिवार का प्रचलन बढ़ रहा है ? संस्कृति की संरचना बनाए रखने, उसे स्वामित्व प्रदान करने और प्रभावपूर्ण बनाने में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है? किसी भी समाज में महिलाएँ संस्कृति के हस्तांतरण का प्रमुख माध्यम रही हैं। महिलाओं का सम्पर्क परिवार में प्रत्येक सदस्यों के साथ परम्परा प्रधान रीतियों के अनुसार होता है। समाज में प्रचलित मूल्यों एवं आदर्शों को एक

पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करने में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

शिक्षा के बढ़ते प्रभाव व आवागमन के साधनों की सुलभता ने जनजातीयों के पर्व व त्योहारों को भी प्रभावित किया किन्तु आधुनिक बाजार एव शहरी प्रभाव होने के बाद जनजातीयों के द्वारा पर्व के मूल भाव को बचाने का प्रयास भी हो रहा है।

हजारों जनजातीय महिलाएं एवं लड़कियाँ अपने मूल जनजातीय क्षेत्र के पृष्ठ प्रदेश से नगरीय शहरी केन्द्रों की ओर प्रवासी हुए हैं। यह शिक्षा प्राप्त करके, व्यवसाय करने एवं व्यवसाय के शोध के लिए नगरीय परिवेश के साथ समायोजन करती रही हैं। प्रवासी होने पर अनेक समस्याओं का सामना करते हुए अपने विचारों में व जीवन पद्यति में परिवर्तन करती रहीं हैं। जनजातीय महिलाएँ अपनी परम्परागत जीवन पद्यति से स्थानीय नगरीय जीवन पद्यति को अपनाती हैं।

उद्देश्य

महिलाओं मे भाषा, रीतिरिवाज, पर्व एवं त्योहारों के विषय का ज्ञान पुरूषों की तुलना में स्वभावतः ही अधिक होता है अतः जनजातीय महिलाओं में भी इसी विशिष्टता का समावेश है। इस मान्यता के तहत् उराँव जनजाति की महिलाओं को अध्ययन के लिए चयनित किया गया। जबलपुर नगर में उराँव के अतिरिक्त गोंड़, भील व बैगा जनजातीयों की संख्या अधिक है और इनमें अनेक शोधकार्य किए जा चुके हैं किन्तु उराँव जनजाति समूह पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है। इसलिए प्रस्तुत शोध में इस जनजाति का चयन किया गया। अध्ययन के उद्देश्यों ने निम्नलिखित बिन्दु सम्मिलित हैं –

1. जनजातीय संस्कृति के विकास के प्रति विचार जानना।
2. जनजातीय संस्कृति में परिवर्तन के प्रति विचार जानना।
3. जनजातीय संस्कृति में भाषा के प्रति रूचि एवं परिवर्तन जानना।
4. जनजातीय संस्कृति के संरक्षण के प्रति सरकारी प्रयासों में जनजातीय भाषा के महत्व को स्थापित करना।
5. जनजातीय संस्कृति के विकास में महिलाओं के विचार जानना।

प्राकल्पना

उराँव जनजातीय साहित्य के अध्ययन के पश्चात् प्रस्तुत शोध में प्राकल्पना का निर्माण करने पर प्रमुख बिन्दु स्पष्ट हुए। 1. प्रवासी उराँव जनजातीय महिलाओं में परम्परागत संस्कृति के प्रति सकारात्मक सोच है। 2. उराँव जनजातीय महिलाएँ संस्कृति म परिवर्तन को आवश्यक मानती हैं। 3. उराँव जनजातीय महिलाओं में जनजातीय भाषा के प्रति लगाव है किन्तु उसका प्रचलन एवं प्रसार में वे अपनी भूमिका निश्चित नहीं कर पाती।

अध्ययन पद्यति

पद्यति किसी भी शोध प्रक्रिया का महत्वपूर्ण भाग है एवं शोध समस्या का व्यवस्थित समाधान है। अध्ययन में सम्मिलित शोध क्षेत्र के लिए म.प्र. के जबलपुर नगर का चयन उद्देश्य पूर्ण न्यादर्शन पद्यति के आधार पर किया गया। जबलपुर नगर में उराँव जनजाति समूह के परिवार की संख्या 500 से अधिक है जो धर्मान्तरित एव अधर्मान्तरित दोनों ही रूपों में नगर में निवास करते हैं। इनमें इसाई धर्मांतरण वाले उराँव जनजातीय समूह की 100 शिक्षित महिलाओं का चयन किया गया। उराँव जनजाति की धर्मान्तरित महिलाओं का चयन करने का उद्देश्य उनकी जनजातीय संस्कृति पर अन्य संस्कृति के प्रभावों के परिणामों को जानना रहा। चयनित उराँव जनजातीय महिलाओं का उनके संस्कृति के प्रति रूझान जानने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया जिसका सांख्यिकीय विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया।

विश्लेषण

अध्ययन के लिए चयनित जनजातीय महिलाओं में से शतप्रतिशत महिलाओं ने जनजातीय संस्कृति के प्रचार प्रसार को स्वीकार किया। संस्कृति का मूल आधार भाषा के प्रति सभी महिलाओं में सकारात्मक विचार पाए गए किन्तु परिवार में अन्य सदस्यों के साथ विशेषतः बच्चों के साथ व्यवहार में अन्य भाषा विशेषतः हिन्दी भाषा की ही प्रयुक्ति मुख्य रूप में पायी गयी। जो महिलायें उराँव भाषा से परिचित नहीं हैं वे अपने बच्चों को भी उराँव भाषा सिखाना नहीं चाहती जिन्होंने उराँव भाषा से बच्चों को परिचित कराने की बात कही है उसके कुछ कारणों को उजागर किया है।

1. मातृभाषा का सम्मान 2. सामाजिक संबंधों में प्रगाढ़ता बनाए रखने के लिए 3. भाषाएँ संस्कृति के उत्थान के लिए संस्कृति के संरक्षण के लिए 4. परम्परा संस्कृति के मूल रूप स परिचय के लिए 5. पारिवारिक जीवन शैली को समझने के लिए 6. एक परिपक्व शषा बनाने के लिए 7. परस्पर समझ व आत्मीयता के लिए 8. समाज को मजबूत बनाने के लिए 9. समाज भाषा के रूप में विकास व विशिष्टता की पहचान बनाए रखने के लिए 10. सुरक्षा का अहसास होता है 11. अच्छ वैवाहिक रिश्ते के लिए 12. आत्म विश्वास, स्वाभिमान एवं सांस्कृतिक गौरव के लिए 13. अपने संस्कृति के सकारात्मक पक्ष की रक्षा के लिए 14. जनजातीय समाज में संगठन के लिए 90 प्रतिशत महिलाओं ने उराँव लोक कला के क्षेत्र में लोकगीत एवं लोक कथाओं से परिचित होने की स्थिति स्पष्ट की किन्तु 10 प्रतिशत महिलाओं ने भाषा की अनभिज्ञता के कारण नकारात्मक सोच स्पष्ट की। युवाओं में लोकगीतों के प्रति उत्साह पाया जाता है एवं लोक नृत्य में भी सहभागिता स्पष्ट होती है किन्तु केवल लय एवं धुन के आकर्षण के कारण। क्योंकि भाषा की समझ के अभाव में लोक गीतों का अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाता जो लोक कलाओं के प्रति आकर्षण के अधुरे भाव को जाहिर करता है। उराँव भाषा को साहित्य की श्रेणी में शामिल करने के लिए किए जाने वाले प्रयासों के प्रति प्रसन्नता व्यक्त करते हुए 72 प्रतिशत महिलाओ ने केवल प्राथमिक शिक्षा तक इसकी उपयोगिता स्वीकार की एवं अपने बच्चों की मध्यम एवं उच्च स्तर की शिक्षा अन्य भाषाओं के माध्यम से देना उपयोगी माना। संस्कृति का अपना एक पृष्ठक्षेत्र होता है जहाँ उसकी वास्तविक पहचान होती है।

ऐसे जनजातीय ग्रामीण क्षेत्र में अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ आज भी कुछ थोड़े परिवर्तन के साथ मौजूद है। शतप्रतिशत महिला उत्तरदाताओं ने अपने मूल निवास ग्रामीण क्षेत्रों से अपने बच्चों को परिचय कराने में उत्साह प्रकट किया एवं बच्चों में ग्रामीण क्षेत्र के प्रति

सकारात्मक मानसिकता को स्वीकार किया। अर्थात् उराँव संस्कृति के प्रति आगामी पीढ़ी में सकारात्मक सोच विकसित हो इस विचार की प्रधानता जनजातीय महिलाओं में पायी गई किन्तु इस परिपक्ष्य में किए जाने वाले उनके प्रयासों में शिथिलता स्पष्ट हुई। भाषा की उपादेयता को स्वीकार किया गया किन्तु उसके प्रति प्रयास का अभाव पाया गया।

निष्कर्ष

जनजातीय संस्कृति जिसे लोक संस्कृति की संज्ञा भी दी जाती है। नगरीयकरण, आधुनिकीकरण एवं पाश्चत्यीकरण संस्कृतिकरण आदि परिवर्तन प्रक्रिया से लोकसंस्कृतियों पूरी तरह विनष्ट ता नहीं हुए है पर उनके स्वरूप एवं गठन में महत्वपूर्ण बदलाव आये हैं। तीव्र परिवर्तन के दौर में लोकसंस्कृतियाँ विलुप्त तो नहीं हुई पर नई चुनौतियों के साथ उन्हें एक–एक नई उभरती संस्कृति से अपना अनुकूलन करना पड़ा। बदलते जीवन के प्रतिमान एवं कला रूपों में विशेषीकरण की बढ़ती प्रभावशीलता ने लोक कलाओं के प्रकार्यो में परिवर्तन लाया। मनोरंजन के नए रूप विकसित हुए व नई दृष्टियाँ व शैलियाँ विकसित होने लगी। लोक कलाएँ जनजातीय संस्कृति का जीवन होती हैं। जो मनोरंजन के अतिरिक्त अन्य उद्देश्यों को भी पूरा करती हैं। सस्कृति परम्पराओं का ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहचाने का प्रमुख आधार, लोक कलाओं में जनजाति समुदाय की जीवनदर्शन की अभिव्यक्ति एवं सूक्ष्म व्याख्या अन्तर निहित होती थी। लोक कलाओं के प्रत्येक कला रूपों में समुदाय की सहभागिता होती थी। कोई भी लोक कला किसी भी अर्थ में जड़ नहीं होती इनकी प्रस्तुतियों में स्पष्ट अन्तर देखा जा सकता है। गतिशीलता मानव समाजों की एक अनिवार्य प्रवृत्ति है और लोक कलाएँ भी एक सामुदायिक उत्पाद के रूप में विकसित और परिमार्जित होती है।

शिक्षा एवं विज्ञान के विकास व प्रसार ने नवोन प्रबुद्ध वर्ग को जन्म दिया। इस वर्ग में एवं जनजाति जनसाधरण लोगों के बीच दूरी बढ़ती गई। एक ही समाज के अलग–अलग समुदाय एवं समूहों के विकास की गति में भी अन्तर आया। आज भी जनजाति समुदाय के तीन रूप स्पष्ट होते हैं मूल जनजाति समूह, हिन्दु धर्मान्तरण जनजाति समह एवं इसाई धर्मान्तरण समूह। इन समूहों में संस्कृति मिश्रण एवं पारस्परिक अन्तर स्पष्ट होता है। अनेक जनजातियों में पर्व एवं त्योहारों से जुड़े रीतिरिवाज में समयानुकूल परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है।

जनजातीय संस्कृति के संरक्षण से जुड़े सरकारी प्रयासों में लोक कलाओं से जुड़े वैकासिक कार्यक्रमों में मूर्तिकला, शिल्पकला एवं संगीत से जुड़ी कलाओं को प्रश्रय दिया गया। किन्तु भाषा क परिचय के अभाव में यह केवल दृश्यसामग्री के रूप में तथा संगीत में केवल लय एवं धुन की समग्रता तक ही सिमट कर रह जाती है।

प्रत्येक संस्कृति आज विकास के नए आयामों की ओर अग्रसर हो रही है। जिनमें जनजाति संस्कृति भी सम्मिलित है। अनिवार्यतः भाषा की उपादेयता को समझकर उसे साहित्य का दर्जा देकर प्रचार प्रसार का कार्य श्रेयष्कर है। इससे जनजाति संस्कृति का परिचय अपने उपादेयता के आधार पर हो सकेगा एवं इस कार्य में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण होगा। क्योंकि केवल शिक्षण की सामग्री अथवा माध्यम के रूप में भाषा जीवन्त नहीं रहती इसे प्रचलन में लाना आवश्यक होता है।

संदर्भ

1. डॉ. हरिशचन्द्र उप्रेती – भारतीय जनजातीयाँ संरचना एवं विकास–राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर 2002–240–पृष्ठ 243।
2. श्यामाचरण दुबे – समय और संस्कृति – वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली –1960–पृष्ठ 287।
3. बोस.एन.के.– ट्रायबल इकॉनामी – नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नयी दिल्ली, 1955–पृष्ठ 121।
4. जनजातीय संस्कृति – विकिपीडिया
5. डी.एन.मजूमदार–रेसेज एन्डकल्चर ऑफ इंडिया – 1961 पृष्ठ 124
6. शरत्चन्द्र राय–उराँव रिलीजन एन्ड कस्टम – 1928 जनजातीय संस्कृति विकिपोडिया।
7. उराँव संस्कृति परिवर्तन एवं दिशाएँ– डॉ. शांति खलखो–कुँडुख विकास समिति–2009–पृष्ठ110–112

टेबिल नं. 1

दैनिक बोलचाल में भाषा का प्रयोग

भाषा	हाँ	नहीं
हिन्दी	100	–
अंग्रेजी	09	91
उराँव	21	79

टेबिल नं. 2

उराँव भाषा का प्रयोग

	बोलना		समझना	
	हां	नहीं	हाँ	नहीं
हिन्दी	100	–	100	–
अंग्रेजी	21	79	39	61
उराँव	10	90	73	27